नईदुनिया (इंदौर), 26.8.2003

क्या सू की के जीवनकाल में लोकतंत्र देख पाएगा म्यांमार?

सुश्री आँग सान सू की दुनिया भर में इस नाम से लोग परिचित हो चुके हैं। म्यांमार की अभिशप्त जनता को जनतांत्रिक अधिकार दिलाने के लिए अपनी जिंदगी के हर सुख को तिलांजलि देने वाली यह महिला जुझारूपन की न केवल जीते जी किंवदंती बन चुकी है, बल्कि विश्व के हर हिस्से में जनतंत्र बहाली का स्वयंभू बीड़ा उठाने वाले अमेरिका और ब्रिटेन के लिए चुनौती भी है। शांति के लिए सू की को नोबेल पुरस्कार देकर अपनी वाहवाही लूटने वाले पश्चिमी देशों को इराक, अफगानिस्तान और अफ्रीकी देशों की तरह म्यांमार में सैनिक भेजकर तानाशाही खत्म करने की जरूरत महसूस नहीं हुई क्योंकि म्यांमार के पास न तो अकूत तेल भंडार है, न ही इसके अंदरूनी मामले में जबरन दखल देने से कोई और आर्थिक फायदा उठाया जा सकता है।

इससे अमेरिका और उसके पिछलग्गू पश्चिमी देशों की सिर्फ साम्राज्यवादी स्वार्थ से भरी अंतरराष्ट्रीय नीति की कलई खुल गई है। जबकि कम से कम ब्रिटेन को तो थोड़ी शर्म जरूर आनी चाहिए थी, क्योंकि सू की के पति माइकल एरिश वहीं के नागरिक थे। ब्रिटेन में ही पत्नी को अंतिम बार देख लेने की इच्छा सँजोए उन्होंने कैंसर से प्राण त्याग दिए। पश्चिमी देशों को उस समय भी ग्लानि महसूस नहीं हुई। जब म्यांमार की सैनिक सरकार ने सू की को नोबेल शांति पुरस्कार लेने जाने की इजाजत नहीं दी। पुरस्कार सू की की ओर से उनके पति ने ग्रहण किया। हाँ, संयुक्त राष्ट्र के जरिए फूटा हुआ ढोल बजाने का सिलसिला चलता रहता है।

संयुक्त राष्ट्र महासचिव कोफी अन्नान चाहें भी तो अपनी मर्जी से कहीं सेना नहीं भेज सकते। खासकर म्यांमार में तो शांति सेना की जरूरत ही नहीं है क्योंकि यहाँ अपने अधिकारों की लड़ाई जनतंत्र समर्थक शांतिपूर्ण तरीके से लड़ रहे हैं, भले ही सैनिक सरकार निहत्थों को गोलियों से भून दे या जेल में यातनाएँ देकर मार डाले। ऐसी स्थिति में महासचिव के पास एक ही उपाय बच जाता है और वह है अपने शांति दूत मलेशिया के राजनयिक रजाली स्माइल को बीच-बीच में म्यांमार भेजकर दबाव बनाए रखना, जिस दबाव की सैनिक शासक जरा भी परवाह नहीं करते।

वैसे तो इस्माइल सन् २००० से लेकर अब तक म्यांमार के कई चक्कर लगा चुके हैं, लेकिन उनका ताजा दौरा कई मामले में दिलचस्प है। जून के अंतिम सप्ताह में वे उस समय पहुँचे जब सू की को सैनिक अधिकारियों ने एक खास तरह की सुरक्षा प्रदान कर रखी थी। जहाँ उन्हें रखा गया है, उसे 'सुरक्षित जगह या निगरानी' का नाम दिया गया है। सच्चाई यह है कि जो लोग दुनिया को यह कहकर गुमराह कर रहे हैं, उन्हीं से सू की को अपनी जान पर खतरा महसूस हो रहा है क्योंकि किसी को पता नहीं है कि वह 'सुरक्षित जगह' है कहाँ। इतना ही नहीं, थाइलैंड के जरिए सू की को स्वस्थ और प्रसन्न मुद्रा में दिखाने वाली फर्जी तस्वीर भी दिखाई जा रही है, जिसके बारे में भाँति-भाँति के संदेह व्यक्त किए जा रहे हैं।

मयंक शेखर

अभी तक सू की या तो जेल में रही या अपने घर में नजरबंद। पहली बार उन्हें ऐसी जगह रखा गया है, जिसके बारे में किसी को जानकारी नहीं है और यह कहा जा रहा है कि बलवाइयों से बचाने के लिए ऐसा किया गया है, जबकि बलवा करने वाले खुद सैनिक अधिकारी हैं, जो अब उन्हें मानसिक रूप से प्रताड़ित करके जनतंत्र का गला घोंटने पर आमादा हैं।

थोड़ा-सा असर पड़ा, जब दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के संगठन (आसियान) ने हल्ला मचाया। हालाँकि इससे ऐसा नहीं लगता कि म्यांमार की जनता या सू की को निकट भविष्य को कोई सहूलियत मिलने वाली है। आसियान को आश्वस्त करने के लिए, सैनिक सरकार के अखबार 'न्यू लाइट ऑफ म्यांमार' में लंबे-लंबे झूठे बयान छापे जा रहे हैं और सू की के बारे में मनगढ़ंत बातें प्रचारित करके आसियान समेत पूरी दुनिया को गुमराह किया जा रहा है। आसियान को सू की की रिहाई की फिक्र भले न हो अपनी छवि की चिंता है, जो म्यांमार को अपने संगठन में रखने से धूमिल हो रही है।

बात यह है कि आसियान की अध्यक्षता के लिए इस वर्ष म्यांमार की बारी आने वाली है और आसियान देशों पर पश्चिम का दबाव है कि यह पद म्यांमार को नहीं दिया जाए, जब तक कि वह जनादेश का सम्मान करते हुए सभी जनतंत्र समर्थकों को रिहा करके चुने हुए प्रतिनिधियों के हाथ में सत्ता नहीं सौंप देता। आसियान देशों की खुद की आत्मा इसके लिए गवाही नहीं दे रही है। जापान भी म्यांमार के खिलाफ खुलकर सामने आ गया है।

म्यांमार के शासकों ने दुहरी चाल चली और दोनों में ही फँस गए। एक तरफ तो उस जेल के चारों तरफ पहरा कड़ा कर दिया, जहाँ सू की के जनतांत्रिक गठबंधन एनएलडी (नेशनल लीग फॉर डेमोक्रेसी) के तकरीबन १५०० कार्यकर्ता बंद हैं और सू की की 'सुरक्षित जगह' की नाकेबंदी कर दी। दूसरी तरफ सू की की स्वस्थ व प्रसन्न मुद्रा वाली वर्षों पुरानी तस्वीरें लेकर म्यांमार के विदेश मंत्री विन औंग और उपविदेश मंत्री खिन माऊंग विन ने एक साथ आसियान के साथ-साथ जापान व बांग्लादेश की यात्रा का भी कार्यक्रम बनाया, लेकिन उनकी पोल थाइलैंड में ही खुल गई। जब उन्होंने थाइलैंड के प्रधानमंत्री याकसीन शिनावात्रा को ये तस्वीरें दिखाईं। पहली तस्वीर में 'सुरक्षित जगह' पर सू की को प्रसन्न मुद्रा में दिखाया गया है, जबकि उस जगह की तस्वीर है ही नहीं। दूसरी तस्वीर में रजाली इस्माइल को सू की से पिछले साल की मुलाकात का दृश्य दिखाया गया है और तीसरी में सत्तारूढ़ सैनिक सरकार के सर्वेसर्वा थान श्वे से सू की हाथ मिला रही हैं (यह चित्र शायद १९९० का है)। सैनिक शासन के अखबार की प्रतियाँ भी वे अपने साथ ले गए थे जिसमें इस तरह की करीब ३० तस्वीरें छपी हैं।

किसी भी देश ने फोटो को सही नहीं माना, न ही म्यांमार के नेताओं के इस तर्क को स्वीकार किया कि सू की 'अच्छी हालत में हैं और उन्हीं की सुरक्षा का ख्याल करके उन्हें अज्ञात स्थान पर रखा गया है।'

संयुक्त राष्ट्र महासचिव कोफी अन्नान चाहें भी तो अपनी मर्जी से कहीं सेना नहीं भेज सकते। खासकर म्यांमार में तो शांति सेना की जरूरत ही नहीं है क्योंकि यहाँ अपने अधिकारों की लड़ाई जनतंत्र समर्थक शांतिपूर्ण तरीके से लड़ रहे हैं, भले ही सैनिक सरकार निहत्थों को गोलियों से भून दे या जेल में यातनाएँ देकर मार डाले। ऐसी स्थिति में महासचिव के पास एक ही उपाय बच जाता है और वह है अपने शांति दूत मलेशिया के राजनयिक रजाली इस्माइल को बीच-बीच में म्यांमार भेजकर दबाव बनाए रखना, जिस दबाव की सैनिक शासक जरा भी परवाह नहीं करते।

म्यांमार का सबसे बड़ा समर्थक है चीन, जो उसे न केवल आंदोलन की आवाज दबाने के गुर सिखाता है, बल्कि उसके सैनिकों को अत्याधुनिक प्रशिक्षण भी देता है। १९८९ में थ्येनआनमेन चौक पर चीन ने जनतांत्रिक अधिकारों की आवाज दबाने के लिए सैकड़ों छात्रों को टैंकों से कुचल दिया था। उसके पहले १९८८ में म्यांमार को छात्र आंदोलन कुचलने में चीन ने मदद दी। आज चीन का हांगकांग में बुरा हाल हो रहा है और 'एक देश दो व्यवस्था' की आड़ में लोगों की आजादी छीनने की नीति की कलई खुल रही है, क्योंकि लाखों की संख्या में लोग सड़कों पर उतर आए हैं, जिनकी आवाज दबाना संभव नहीं हो पा रहा है। मतलब की राजनीति करने वाले पश्चिमी देश हांगकांग के मामले में म्यांमार की तरह मूकदर्शक नहीं रहेंगे क्योंकि उससे व्यापारिक हित जुड़े हैं।

इस मामले में भारत भी पश्चिमी देशों के ढर्रे पर चल रहा है। जब दिन-प्रतिदिन सू की पर अत्याचार बढ़ रहे हैं, तब भारत ने म्यांमार से संबंध बढ़ाए हैं। जनतंत्र का ढिंढोरा पीटने वाले इस देश के शासकों को अच्छी तरह पता है कि म्यांमार के जरिए उत्तर-पूर्व के विद्रोहियों को हथियार और प्रशिक्षण मिलता है। म्यांमार की जनता को विश्वास हो चला है कि मौजूदा शासकों के जीते-जी उसे खुली हवा नहीं मिलेगी। थान श्वे, खिन न्युंत और माऊंग ये तीनों ही ६५ से ७० के बीच के हैं। सत्ता पर इनकी मजबूत पकड़ है तथा ये स्वस्थ हैं। लेकिन ५७ साल की सू की को बीमार बताकर 'सुरक्षित जगह' पर रखा हुआ है। यह असंभव नहीं है कि किसी दिन उनकी मौत की खबर मिल जाए। या तो अज्ञात लोगों का हमला दिखा दिया जाएगा (जैसा करके मई के पहले सप्ताह में अज्ञात जगह पर रखा गया) या कोई बीमारी दिखा दी जाएगी। सात साल की नजरबंदी के दौरान सू की ने जब पियानो बजाने का शौक छोड़ दिया तो पियानो की आवाज ना आने पर उनकी मौत की अफवाह उड़ा दी गई थी। विश्व के जनतंत्र ठेकेदारों के लिए शर्म की बात है यह। अब इसमें कोई संदेह नहीं रह गया है कि म्यांमार की जनता को आखिरकार खुद ही सामने आना होगा, क्योंकि सारे आर्थिक संबंध टूट जाने से जनता घोर आर्थिक संकट का सामना कर रही है बेशक सू की ने जिस जनतंत्र के लिए अपने पिता, पति और सारा जीवन अर्पित कर दिया वे जीते जी वे देख पाएँगे, इसकी संभावना बहुत प्रबल नहीं दिखती।